

श्रीगणेशायनमः ॥

दयानन्द की बुद्धि.

मुरादाबाद निवासी

ला० जगन्नाथदास सङ्कलित

मिलनेका पता—

मैनेजर ब्रह्मप्रेस इटावा

पष्ठवार	}	संवत्	{	मूल्य) ॥
१०००		१९९९		२॥) में १००

पं० ब्रह्मदेव मिश्र शास्त्रीके प्रबन्धसे

ब्रह्मप्रेस इटावामें मुद्रित

॥ श्री २५ ॥

आन्तरमात्माजयति ॥

दयानन्दकी बुद्धि ।

एक समाजी महाशय अपनी बुद्धि की आन्ति से अथवा द्वेषाग्निकी प्रेरणासे "उलटा घोर कीतवाल को खाटे" इस कहावत के अनुसार हमको आन्तबुद्धि बतलाते हैं अपने गुरुका दोष हन पर लगाते हैं। उन्होंने सभ्यताके विरुद्ध सर्वथा अशुद्ध हनको यह लिखा है कि "अपनी बुद्धिकी आन्तिसे अथवा द्वेषाग्नि की प्रेरणासे कुछेक दिनों से आँखें बँध जाँच बकने लगा है" हमने उनके गुरुकी बुद्धिकी आन्ति स्वधर्म रक्षार्थ विस्तारपूर्वक जगतको दिखाई है और अपने सत्य लेखसे निष्ठावा-दियों पर सम्यक् विजय पाई है, अतः उक्त महाशयकी प्रेरणासे पुनः उनकी बुद्धिकी आन्ति और द्वेषाग्निका नमूना दिखाता हूँ और अज्ञोंको उनके जालसे बचाता हूँ। नहीं २ उक्त महाशयने एक समस्या दी है और हन ने उसकी सम्यक् पूर्ति की है इसको महेशजीका प्रसाद जानिये, और दयानन्दका गुणानुवाद जानिये देखिये दयानन्दकृत ग्रन्थोंमें प्रायः वेदादि सच्छास्त्र विरुद्ध महा अशुद्ध सर्वथा निष्ठा और असमझसादि लेख भरे पड़े हैं। इससे प्रतीत होता है कि उसने अपनी बुद्धि की आन्तिसे अथवा द्वेषाग्निकी प्रेरणासे जो कुछ सुखमें आया

सो आँय वॉय शॉय बकदिया और जो चाहा सो लिख
 दिया । देखो दलपतराय संकलित दयानन्दजीवनचरित्र
 पृष्ठ ५८ । ५९ तथा ६० में उसका कथन है कि “खोटी
 प्रारब्धते इस जगह मुझे एक बड़ा दोष लग गया अर्थात्
 मुझको भंग पीनेकी आदत होगई किसी २ समय उसके
 कारण मैं सर्वथा बेहोश हो जाया करता था वहाँ जब
 मैं भंगके नशेसे मदहोश और बेहोश होकर बैठता हुआ
 था प्रातःकाल एक स्त्रीने मुझे दही दिया मैंने खा लिया
 दही बहुत खटा था इसलिये भंगका नशा उतारने को
 एक अच्छी औषधि होगई, पाठक गण ! विचार की-
 जिये कि पहिले दिन भंग पी और दूसरे दिन दही खाने
 से नशा उतरा ऐसे भंगकी बुद्धि आंत होनेमें क्या सन्देह
 है ? वह आप कहता है कि ‘मैं भंगके नशे में बहुधा
 बेहोश होजाया करता था, इससे भी स्पष्ट सिद्ध है कि
 उसने अपनी बुद्धिको आन्तिसे और द्वेषाग्निकी प्रेरणा
 से जो कुछ सुखमें आया सो आँय वॉय शॉय बकदिया
 और जो चाहा सो लिखदिया । उक्त जीवनचरित्र के
 पृष्ठ २७ में दयानन्दका कथन है कि ‘मुझे पूरा २ निश्चय
 हो गया कि ब्रह्म मैं ही हूँ, इससे अधिक बुद्धिकी आन्ति
 और क्या होगी और ऐसे अज्ञानीको शान्ति क्या । पृष्ठ
 ३७ तथा ३८ से प्रकट है कि उसने जिन पुरुषोंको अपनी
 आँखोंसे गोबध करते और गोमांस खाते देखा : उन्हें

से सीधा आदि लेकर अपने ब्रह्मचारीसे भोजन बनवाया और खाया । कहिये यह बुद्धि की आन्ति का काम है वा अज्ञताका परिणाम । पृष्ठ ६४ तथा ६५ में आपका वर्णन है कि 'मैं एक भयानक जगह में घुस गया और एक वृक्षके नीचे पड़ रहा वहां दो पहाड़ी अपने एकतरदार सहित मुझको अपनी कोंपड़ियोंमें बुलानेके लिये आये परन्तु मैंने उनका भोजनादि सत्कार स्वीकार न किया क्योंकि वे सब मूर्तिपूजक थे, धन्य जिसको अपनी आंखोंसे गोबध करते और गोमांस खाते देखा उस से सीधा आदि लेकर भोजन करना तो स्वीकार किया और मूर्तिपूजकों के सत्कारका निरस्कार, ये बुद्धि की आन्तिका अन्धकार है वा द्वैपायिनी प्रेरणाका धन-त्कार । यह भी ध्यान रहै कि स्वामी जी मूर्तिपूजकोंही के रजनीय से प्रकट हुए मूर्तिपूजकों ही के अन्तसे उन का शरीर बढ़ा जबतक सब जगह समाज स्थापित नहीं हुए मूर्तिपूजकोंके अतिरिक्त किसके भोजनादि सत्कार से पालन पोषण हुआ । वास्तव में तो यह है कि समाजोंके स्थापित होने पर भी मूर्तिपूजकोंके धन और अन्नादि का त्याग नहीं किया । मूर्तिपूजके महाराजा और धनी धनीत्माओंसे प्रत्यक्ष ही धन लिया जिसको आप ने प्रशंसापत्र समझ कर अपने यजुर्वेदभाष्य अङ्क ४८ । ४९ के टाइटिलवेज पर छपवाया उस की आदि में "श्रीनदेकलिङ्गेयवरो जयति" और इयस्ति श्री कृपा है

छः सहीने महाराजका अन्न घृत नैवेद्यादि पदार्थ खाया
 और चतुर्तीवार दा सहस्र रुपया गांठ बंधाया । राज
 स्थानमें मूर्तिखण्डनका नाम न लिया धनके लोभसे स्व-
 र्तको सर्वथा दी त्याग दिया कहिये ये उनकी बुद्धि
 की भ्रान्तिही का फल था वा राजभय और धनहृष्या
 का प्रचल चल । पृष्ठ ५६ पर दयानन्द का कथन है कि
 "मुझको एक लाश (मुरदा) दरियाके ऊपर वहती हुई
 मिनी में उसको पकड़कर किनारे पर ले आया तब मैंने
 उसकी एक तेज चाकूसे काटना प्रारम्भ किया मैंने दिल-
 को उसमेंसे निकाला और दिलको नाभि से पसली तक
 काटा इसी तरह गिर और गरदन के एक भाग को भी
 काटकर अपने नामने रख लिया इति,, भला ये द्विजा-
 तियों और संन्यासियोंका धर्म है वा नीचों का कर्म ।
 निःस-देह उनसे बुद्धि की भ्रान्ति ने यह अनुचित कर्म
 कराया और संन्यासको धब्बा लगाया वा झूठ बुल-
 वाया और निष्ठ्यावादी बनाया । पृष्ठ ५९ में है कि,
 "जत्र मैं भंगके नशमें सदहोश और बेहोश होकर बैठा
 हुआ था और घोर निद्रामें सोता था तो मैंने स्वप्नमें
 महादेव और पार्वती को देखा पार्वती महादेव जी से
 कह रही थी कि दयानन्द का विवाह हो जावे तो
 अच्छा है परन्तु महादेवने इसके विरुद्ध कहा और मेरी
 भंग की तरफ इशारा किया अर्थात् भंग का जिक्र छोड़ा
 जब मैं जागा तो मुझे बड़ा दुःख और क्लेश हुआ इति॥

यहां उनकी बुद्धिकी भ्रान्तिका बारापार नहीं है और कलियुगाचार्य की सत्यासत्य तथा धर्मार्थर्म का विचार नहीं यह सारी भंगकी तरंगें हैं । और विषयासक्तिकी उमंगें । बुद्धिकी भ्रान्तिका विनाप है और भंगके नशेमें प्रलाप, घोरनिद्रा, सुषुप्तिका नाम है । यहां स्वप्नका ब्यापकान है विवाहका उत्साह मनमें बना या संन्यासीका चित्त अनुचित कर्मों में फंसा या महादेवजीने उसके महा भंगही होनेपर संकेत किया और संन्यासीके विवाहका निषेध करदिया तब उस की महादुःख और महाक्लेश हुआ प्रतिकूल महेश हुआ ॥ शेर-क्यों नही दुःख और क्लेश भला, जिसका होते विवाह, रुकजाये ॥

सत्यार्थप्रकाश सुद्धित मन् १८७५ के पृष्ठ ४५ में मांसादि पदार्थोंसे होम करना लिखा है । पृष्ठ १४९ मांसके पिण्ड देनेमें कुछ पाप नहीं । पृष्ठ १४८ गाय की गधीके समान लिखा उसको घास जल भी दुग्धादि प्रयोजन के वास्ते देने अन्यथा नहीं । पृष्ठ १७१ यज्ञ के वास्ते जो पशुओंकी हिंसा है सो विधिपूर्वक हनन है । पृष्ठ ३०२ कोई भी मांस न खाय तो जानवर पक्षी मत्स्य और जलजन्तु जितने हैं उन से शतसहस्रगुने हो जाय फिर मनुष्योंको मारने लगे और खेतों में धान्य ही न होने पावे फिर सब मनुष्यों की आजीविका नष्ट होनेसे सब मनुष्य नष्ट होजाय । पृष्ठ ३०३ जहां २ गोमेधादिक लिखे हैं, वहां २ पशुओंमें नरोंका मारना लिखा है और एक

धैर्यसे हज्जान्तां गेयां गर्भवती होती हैं इससे हानि भी
 नहीं होती और जो बंध्या गाय होती है उसको भी
 गोमेषमें नारना क्योंकि बंध्यागायसे दुग्ध और वत्सा-
 दिकोंकी उत्पत्ति नहीं होती । पृष्ठ ३९९-पशुओंको ना-
 रनेमें पोड़ा सा दुःख होता है परन्तु यज्ञमें चराचरका
 अत्यन्त उपकार होता है इति । पाठकगण ! ऐसा शास्त्र-
 विरुद्ध अधर्म युक्त लेख करना दयानन्दकी आन्तबुद्धि
 की परिणाम है अथवा द्वेषाग्निकी प्रेरणाका काम ।
 संस्कारविधि सुद्धित संघत् १९३३ का पृष्ठ ११ जो चाहै
 कि भोग पुत्र पंडित मदसद्विवेकी शत्रुओंको जीतने वाला
 स्वयं जीतनेमें न आने वाला युद्धमें गजन द्वय और निर्भ-
 यता करने वाला शिक्षितवाणी का बोलने वाला सब
 वेद वेदांग विद्याका पढ़ने और पढ़ाने तथा सर्वायु का
 भोगने वाला पुत्र होय वह कामयुक्त भातको पकाके पू-
 र्वोक्त घृतयुक्त खाय । पृष्ठ ४१ अज्ञाकी सांसका भोजन अ-
 ज्ञादिकी इच्छा करनेवाला तथा विद्या कामनाके लिये
 तित्तिरिका सांस भोजन करावे इति । बुद्धिकी आन्तिने
 यहांतक तो आया है कि उनसे काम भोजन का उप-
 देश कराया है । नहीं २ शिष्योंके लिये अद्भुत प्रयोग
 बताया है जिसका फल अपने लेखमें सम्यक् दर्शाया है ।
 पृष्ठ ४१ गर्भधारणसे चतुर्थ महीने में निष्क्रमण संस्कार
 करे किंवा इसके पूर्व भी यथायोग्य देखे तो करै वालाक

की वस्त्र पहिराके शुद्ध देशमें फिरावै इति, यहां बुद्धि की
 आंतिने स्वामीजीको कैसा नचाया है जिसकी प्रेरणासे
 उन्होंने गर्भमें स्थित बालकको वस्त्र पहिराके शुद्ध देश
 में फिराना महा असंभव गीत गाया है । पृष्ठ १४१ सू-
 त्तकके उरीर प्रमाणके बराबर घी कर्पूर चन्दनादि सुगंध
 साथ लेले न्यूनसे न्यून तीससेर घी अवश्य होना चा-
 हिये इतना भी घृतौदि न होय तो न गाछै न जलमें
 छोड़ै और न दाह करै किन्तु दूर जाके जंगलमें छोड़
 आवै इति, कहिये यह बुद्धि की आन्तिकी लीला है वा
 वेदकी आज्ञा, जंगलमें मुरदे डाले जायगे तो जगत्का
 उपकार होगा वा संहार, कुछ हो दावा वाक्य प्रमाण है
 गुरुकी आज्ञा माननेकीने शिष्योंका कल्याण है । पृष्ठ
 १५० सूतकके भस्म और अस्त्रि को २० जिमें गाड़देवे अथवा
 बाग वा खेतमें डालदेवे इति, यहां तो बुद्धि की आन्ति
 ने खूब घूल उड़वाई गुरुजीने शिष्योंकी मृत पुरुषोंकी
 भस्म अस्त्रि को बाग और खेतमें डालनेकी अच्छी विधि
 सुनाई । ऋग्वेदादि साप्यमुनिका पृष्ठ २१४ विवाहित
 पतिके मरने वा रोगी होनेसे दूसरे पुरुष वा स्त्रीके साथ
 सन्तानोंके अभावमें नियोग करे तथा दूसरेकेभी मरना
 वा रोगी होनेके अनन्तर तीसरेके साथ करले इसी प्रकार
 दश तक करनेकी आज्ञा है पुरुषके लिये भी विवाहित
 स्त्री के मरजाने पर विधवा के साथ नियोग करने की
 आज्ञा है और जब वह भी रोगी हो वा मरजाय तो

सन्तानोत्पत्ति के लिये दशम स्त्री पर्यन्त नियोग कर लेवे । सत्यार्थप्रकाश नुद्धित सन् १८८४ पृष्ठ ११८ [इमां-
 त्वमिन्द्र०] इस मन्त्रमें ग्यारहवें पुरुष तक स्त्री नि-
 योग कर सकती है वैसे पुरुष भी ग्यारहवीं स्त्री तक
 नियोग कर सकता है, जब पति सन्तानोत्पत्ति में अ-
 समर्थ होवे तब अपनी स्त्री को आज्ञा देवे कि हे भुम्हे
 सौभाग्य की इच्छा करनेहारी स्त्री ! तू मुझसे दूसरे
 पति की इच्छा कर, क्योंकि अब मुझमें सन्तानोत्पत्ति
 की आशा मत करे । पृष्ठ ११९ विवाहिता स्त्रीका वि-
 वाहित पति धर्म को परदेश गया हो तो आठ वर्ष
 विद्या और कर्त्ति के लिये गया होतो छः और धनादि
 कामना के लिये गया हो तो तीन वर्षतक वाट देखो
 पश्चात् वह नियोग करके सन्तानोत्पत्ति कर ले जब
 विवाहित पति आवे तब नियुक्त पति छूट जावे । जो
 पुरुष अत्यन्त दुःखदायक हो तो स्त्रीको उचित है कि
 उसको छोड़के दूसरे पति से नियोग कर सन्तानोत्पत्ति
 करके उसी विवाहित पति के दायभागों सन्तानोत्पत्ति
 करलेवै-पृष्ठ १२० गर्भवती स्त्री से एक वर्ष सन्तान न
 करने के समय में पुरुष वा स्त्रीसे न रहागार तो किसी
 से नियोग करके उसके लिये पुत्रोत्पत्ति करदे इत्यादि
 कहिये स्थानीजी ने बुद्धि की भ्रान्ति की प्रेरणासे अथवा
 अपनी स्वाभाविक अज्ञतासे यह कैसा शास्त्रविरुद्ध सद्दा

अगुह सर्वथा अयुक्त और असमझन लेख किया है कि जिसने लक्ष्मीको भी लज्जित कर दिया है। अधर्मको धर्म बताया है अज्ञोंको कुनार्ग में चलाया है। परस्त्री और परपुरुष संगस ही का नाम वदभिचार है। आर्योद्देश रत्नमालाके पृष्ठ २२ में स्वामीजीका भी यही सुविचार है बुद्धि की भांतिसे आँय बाँय शौंय बकना इसीका नाम है जो कि सम्पूर्ण सज्जनोंकी दृष्टिमें बुराकाम है। उक्त सत्यार्थप्रकाश पृष्ठ ८८ को मुखादि अंगोंसे ब्राह्मणादि उत्पन्न होते तो उपादान कारणके सदृश ब्राह्मणादिकी आकृति अवश्य होती जैसे मुख का आकार गोलमोल है वैसेही उनके शरीरका भी गोलमोल मुखाकृतिके समान होना चाहिये इत्यादि। यहां बुद्धि की भ्रान्ति प्रत्यक्ष हैं यज्ञों में महायज्ञ का नाम दत्त है उत्पत्ति स्थान उपादान नहीं होता जिस अंग से जो उत्पन्न होता है वह उस अंग के समान नहीं होता। पृष्ठ ८९ प्रश्न जो किसी के एक ही पुत्र वा पुत्री हो वह दूसरे वर्ण में प्रविष्ट हो जाय तो उसके मा बाप की सेवा कौन करेगा।। उत्तर—उनको अपने लड़के लड़कियों के बदले स्ववर्णके योग्य दूसरे सन्तान विद्यासभा और राजसभाकी व्यवस्थासे मिलेंगे इत्यादि। जिन दिन आर्योंमें इसका प्रचार होगा जगत्में हाहाकार होगा ऐसा असंख्य लिखना बुद्धि की भ्रान्ति ही का प्रताप है अथवा

किसी देवता का शाप है । पृष्ठ ८७ उत्तम स्त्री सब देश
 तथा सब मनुष्योंसे ग्रहण करे इति, इस आज्ञासे सम्यक्
 विदित है कि मुसलमान और ईसाई तो क्या हमारे
 भंगी तक की कन्या भी, दयानन्द के मत में विहित
 है । बुद्धि की भ्रान्ति ने स्वामीजीका सारा ज्ञान हर
 लिया उसीकी प्रेरणासे उन्होंने शिष्यों को सब देश
 तथा सब मनुष्योंसे उत्तम स्त्री ग्रहण करने का उपदेश
 कर दिया । पृष्ठ ११८ जब उपासना करना चाहे तब ए-
 कान्त शुद्ध देशमें जाकर आसन लगा प्राणायाम कर
 वात्स्य विषयों से इन्द्रियों को रोक मनको नाभि प्रदेश
 में वा हृदय कण्ठ, नेत्र, शिखा अथवा पीठके मध्य
 हाड़ में किसी स्थान पर स्थिर कर अपने आत्माका
 विवेचन करके परमात्मामें नग्न होकर संयमी होवे इति
 स्वामीजीकी बुद्धि की भ्रान्ति अति प्रबल है उसीका
 यह विषरूप फल है कि जिसने प्राणायाम मूर्त्ति की
 पूजा तो छुड़वाई और पीठके हाड़ में ईश्वर की उपा-
 सना कराई धन्य ? पृष्ठ १९४ ईश्वरको त्रिकालदर्शी
 कहना मूर्खताका काम है इति । ईश्वरको त्रिकालदर्शी
 न मानना बुद्धि की भ्रान्ति का काम है वा नास्तिकता
 का परिणाम । स्वामीजीने आर्याभिविनयके पृष्ठ ७६ में
 स्वयं ईश्वरको त्रिकालदर्शी लिखा है परस्पर विरुद्ध दो
 लेखोंमें अवश्य एक जगह उनकी मूर्खता है । पृष्ठ २०८
 (प्रश्न) अनादि किसको कहते और कितने पदार्थ अ-

नादि है इति, महाबुद्धि की भ्रान्ति ने स्वामीजी को ऐसा
 अज्ञ बनाया कि प्रथम प्रश्न का उत्तर लिखने हीमें न
 आया । पृष्ठ २४१ मुक्तिमें जाना वहांसे पुनः आना ही
 अच्छा है क्या थोड़ेसे कारागारसे जन्म कारागार दण्डवाले
 प्राणी अथवा फांसी को कोई अच्छा मानता है ? जब वहां
 से आना हो न हो तो जन्म कारागारसे इतना ही अ-
 न्तर है कि वहां मजबूरी नहीं करनी पड़ती इति, जिसने
 मुक्ति को कारागार और फांसी के सन्तान माना है और
 बंधनमें आना ही उत्तम जाना है उसकी बुद्धिके भ्रान्त
 होनेमें किसी को संशय नहीं है और उसको नास्तिकों
 का शिराभय कहने में मय नहीं । पृष्ठ २४१ जब तक
 ३,०००० (तीनलाख साठ सहस्र) बार उत्पत्ति और प्र-
 लय का जितना समय होता है उतने समय पर्यन्त जीवों
 को मुक्तिके अनादिमें रहना इति, यह स्वामीजीने सौ
 वर्षके दिन फेलाये हैं और अंक तथा अक्षरोंमें अपवाये
 हैं महा अशुद्धि की है बुद्धि की भ्रान्ति एकको दस ब-
 तना रही है तीनलाख साठसहस्र अक्षरों में लिखे हैं
 अनपेक्ष यन्त्राजयकी अशुद्धि न कहिये मूठ की शरण न
 कहिये । पृष्ठ २८१ जो शीत प्रधान देश हो तो काम
 चार है चाहे जितने केश रखे और जो अति उष्ण देश
 हो तो मधु शिखा सहित छेदन करा देना चाहिये क्यों
 कि शिरमें बाल रहने से उष्णता अधिक होती है और

उससे बुद्धि कम हो जाती है । डाढ़ी सूँझ रखने से भोजन पान अच्छे प्रकार नहीं होता और उच्छिष्ट भी बालोंमें रह जाता है इति पृष्ठ २७९ और जो विद्या का चिन्ह धनोपवीत और शिखा को छोड़ मुसलमान ईसाइयोंके सदृश बन बैठना यह भी व्यर्थ है इति, आप ही शिखा के त्यागीको मुसलमान ईसाइयोंके सदृश कहना बुद्धि की भ्रान्तिका सन्यक् परिचय है और स्वामीजीन यज्ञोपवीत और शिखा का त्याग कर दिया या इससे उनका मुसलमान और ईसाइयोंके सदृश बन बैठना निश्चय है ।

पृष्ठ २६६ यह राजपुरुषों का काम है कि जो हानि कारक पशु वा मनुष्य हों उनको दण्ड देवें और प्राणसे भी वियुक्त कर दें उनका नांस चाहें लुत्ते आदि नांसाहारियोंको खिला देवे वा जला देवें अथवा कोई नांसाहारी खावे तो भी संसार की कुछ हानि नहीं होती किन्तु उस मनुष्य का स्वभाव नांसाहारी होकर हिंसक हो सकता है इति, स्वामीजीकी बुद्धि भ्रान्तिका भगडार है और अज्ञताका आगार जो कि नांसाहारी मनुष्योंको हिंसादि पशुओं और मनुष्योंका नांस खानेवाला जानती है । क्योंली ; वही बुद्धि ऋषिमुनियोंके ग्रन्थोंमें वेद विरुद्ध होनेका निर्णय करनेवाली है वा सत्यासत्य और धर्माधर्म को कोई अन्य बुद्धि पहचानती है ?

पृष्ठ ३३ हिरण्यनाभ-पृथ्वीको चटार्कके समान लपेटे सिंहरहाने धरती गयाः हिरण्यकश्यपने एक लोहे का

ज्ञानः अग्निर्मे तथाके दत्तते कहा कि जो लोग इन्द्रदेव
 राज ब्रह्मा हो तो पशुने से न चलेगा महादेव शम्भुने
 जो गन्धर्व मनमें बंला हुई बलने से बन्धुगा वा नहीं :
 गारायत ने जब दंभपर छोटी छोटी चीटियोंकी पंक्ति
 बनाई : पृष्ठ ३३४ रसेन वायु वेगेन जगत् नोकुलं प्रति
 कि अश्वत्थीलंके भेजने से वायुके लेगके समान दौड़ने
 वाले घोड़ोंके रूपपर बैठकर सूर्योदयसे चले और बार
 नील गोकुलने सूर्यास्त समय पहुँचे : पूजनाका शरीर
 लः लीग चौड़ा और बहुतसा लम्बा लिखा है : इत्यादि
 लेख बुद्धि की भ्रांतिहीके कारण स्वामीजीने भागवतके
 नामसे किया है अथवा द्वेषाग्निकी प्रेरणासे लिखदिया
 है वस्तुतः भगवतमें उनके लेखानुसूल नहीं है और यह
 लिखने और पढ़ने तथा छापनेवालोंकी भूल नहीं न-
 हात्माजीकी भ्रान्त बुद्धि हीका प्रभाव है अथवा उ-
 नका जान झुकता झूठ लिखनेका स्वभाव : पृष्ठ ३३३
 जानश्रुति सूत्रने भी वेद 'रैक मुनि' के पास पड़ा
 या इति । जानश्रुतिकी सूत्र कहनेवाला निरुद्धदेह
 भ्रान्त बुद्धि ही है क्योंकि वेदव्यास सहस्रिने उत्तर की-
 नासामें उनके दात्रिय होनेकी सम्पत्ति सिद्धिकी है ।
 पृष्ठ ३२२ जिस बातमें ये सहस्र एकमत हों वह वेदमत
 भाह्य है और जिसमें परस्पर विरोध हो वह कल्पित
 झूठ अर्थन, अपाह्य है इति, बाबाजीने भंग बहुत परी
 है उसीने उनकी बुद्धि सर्वथा भ्रान्तकी है । उसने और तो

जो कुछ शास्त्र बिलकुल अन्यथा लेख कराया सो कराया परन्तु यह महाशोक है कि वेदोंको स्पष्ट कल्पित झूठ अधर्म और अग्राह्य कराया ।

पृष्ठ-५४६ जो दूसरे मतोंकी कि जिनमें हजारों करोड़ों मनुष्य हों झूठा बतलावे और अपने को सच्चा उससे परे झूठा दूसरा कौन मत हो सकता है, इति, बुद्धिकी भ्रान्ति ने यह क्या कटपट्टांग लिखवाया उसीके हाथसे उसका घर ढवाया सब जगहोंको सच्चा ठहराया और अपने झूठे मतको आप झूठा बताया । शायद अपने किये से पछताया अतएव अन्तमें यह खपवाया कि जो दूसरे मतों को कि "जिनमें हजारों करोड़ों मनुष्य हों झूठा बतलावे और अपने को सच्चा उससे परे झूठा दूसरा मत कौन हो सकता है" इस लेखसे स्वमतका झूठा होना सम्यक् दर्शाया परन्तु बुद्धि की भ्रान्तिसे अथवा द्वेषाग्नि हठ दुराग्रह और पक्षपात की प्रेरणासे चेलोंकी समझमें उसका आशय फिर भी न आया या यूँ कहिये कि कलियुग ने अपना प्रभाव दिखाया अज्ञानोंको भ्रमाया धर्म को मिटाया और अधर्म को फिर बढ़ाया ।

पृष्ठ ५८८ अविद्वानों को अक्षुर पापियोंको राजस अनाचारियों की पिशाच मानता हूँ इति, आजकल जो कोई समाजमें चला जाता है वह आर्य ही कहाता है आर्योद्देश रत्नमालाके पृष्ठ ११ में जो आर्य का लक्षण रूपा है वैसा तो कोई विरला है । प्रायः और ही

प्रकारके दृष्टिमें आते हैं वे क्यों आर्य कहाते हैं ? सम्राजियोंको अपने गुणके लेखानुसार इसका प्रबन्ध करना चाहिये जो वैयास जी ने उनका वैयास ही नाम धरना चाहिये वा स्वामी जी ने अपना मत बढ़ानेके हेतु अपने सम्पूर्ण चेतनोंको आर्य उपाधिका पारितोषिक दिया है, और अपनी बुद्धिकी आन्ति शयवा द्वेपाग्निकी प्रेरणा से स्वकृत आर्य लक्षणा पर कुछ ध्यान नहीं किया, यह दयानन्दजी की बुद्धि आन्तिका नमूना गद्देगजी का प्रसाद है जिससे सर्वत्र सूर्यवत् प्रकाशित उन की अज्ञता और प्रमाद है दयानन्दजीके अज्ञानकी संक्षेपसे परीक्षा है और उनके अन्यथा लेखोंकी समीक्षा । जगन्नाथदाम के सत्यवक्ता होनेका प्रमाण है, धर्मरक्षकों का धनुस्त्राण, यदि हम पर मिष्टादीपारोपण करने वाले नडाशय के अन्तःकरण में हठ दुराग्रह और पक्षपात नहीं है और उनकी आंखोंके आगे धंधेरी रात नहीं तो हमारे लेख को देखकर दयानन्दजीकी अवश्य आन्त बुद्धि बतलायेंगे और सम्पूर्णकी उनका आन्त बुद्धि होना सम्यक् समझायेंगे । यदि अपनी बुद्धिकी आन्ति शयवा द्वेपाग्निकी प्रेरणासे कुछ आर्य वैयास शाय भूठी बातें बनावेंगे तो यथोचित उत्तर पायेंगे । जगत्को हंसाये और प्र-
पनी अज्ञता पर पछतायेंगे ॥ इति ॥

काठने की मत दयानन्दजी के १ यत् इन्द्रज

धर्मके जो हैं सत्यानन्द इत की दय्ये हाय में

ॐ इति ॥ ३३ ॥

